Dr. Neelam Kumari
Associate Professor
R.P.M. College Patna City-8
Class:- B.A. Part-III (Hons), Paper- V

स्वामी विवेकानन्द तथा भारतीय समाज

(SWAMI VIVEKANAND & INDIAN SOCIETY)

स्वामी विवेकानन्द वह ज्योतिपुंज हैं जिन्होंने भारत की आधी शताब्दी को ज्योतित किया और एक युगपुरुष के रूप में संतप्त मानवता के कल्याण में लगे रहे। उनका व्यक्तित्व एवं कतित्व सम्पूर्ण विश्व के लिए अनुकरणीय है। स्वामी विवेकानन्द में वे सभी गुण समाहित थे जो उन्हें महान् से महानतम बनाते गये, जो उन्हें नरेन्द्र से स्वामी विवेकानन्द के रूप में अभिनन्दित कर सके। उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस ने उन्हें महानताओं का प्रतीक माना है, ''वह ताल नहीं एक जलाशय है। वह कोई घड़ा या सुराही नहीं, पक्का पीपा है। वह साधारण सोलह पंखड़ियों वाला कमल नहीं वह तो शानदार सहस्रदल कमल है।''

जीवन परिचय

स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी, 1863 को कलकत्ता के एक संभ्रान्त परिवार में हुआ था। उनके पिता कलकत्ता उच्च न्यायालय में वकालत करते थे। उनकी माता विदुषी एवं हिन्दू धर्म की महत्ता में विश्वास रखने वाली महिला थीं। विवेकानन्द पर उनकी माता के सदगुणों का विशेष प्रभाव पड़ा। उनकी मां भक्तिमय जीवन जीने वाली, उच्च चरित्र, उदार, सुशील, कर्त्तव्यनिष्ठ और वीरत्वपूर्ण संस्कार की सजीव प्रतिमा थीं। उनके पितामह बहुत अधिक धनाढ्य व्यक्ति थे, किन्तु 25 वर्ष की आयु में ही समस्त धन–दौलत त्यागकर वे संन्यासी बन गये। परिवार के इस वातावरण का स्वामी विवेकानन्द के मन और मस्तिष्क पर गहरा असर पड़ा। **स्वामी विवेकानन्द का वास्तविक नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था,** किन्तु जब वे बंगाल के महान् सन्त रामकृष्ण परमहंस के शिष्य बने तो वे नरेन्द्रनाथ दत्त से स्वामी विवेकानन्द बन गये। अपने शैक्षणिक काल में विवेकानन्द एक अच्छे वक्ता और वार्तालाप करने वाले थे। उनका स्मृति विलक्षण थी। उनके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि उन्हें ऐनसाइक्लोपीडिया अचानका क ग्यारह खण्ड कण्ठस्थ थे। उन्हें घुड़सवारी, कुश्ती, मुक्केबाजी और तैरने में दक्षता प्राप्त थी। शास्त्रीय संगीत में भी उन्हें गहन रुचि थी। भारतीय संगीत की कण्ठ एवं वाद्य विद्याओं में भी वे प्रवीण थे। अपने समय के अनरूप वे पाश्चात्य विज्ञान, उदारवाद एवं लोकतान्त्रिक मान्यताओं के सम्पर्क में आये। उन्होंने जॉन स्टुअर्ट मिल, काण्ट एवं हीगल की रचनाओं का अध्ययन किया। हर्बर्ट स्पेन्सर से तो उन्होंने पत्र व्यवहार किया और उनकी मान्यताओं की आलोचना भी की। वे शेले के सर्वात्मवाद और वर्डस्वर्थ की दार्शनिकता के प्रेमी थे। वे फ्रांसीसी राज्य क्रान्ति के दौरान प्रतिपादित स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों से बहुत प्रभावित

थे। उन्हें संस्कृत और अंग्रेजी में विशेष दक्षता प्राप्त थी। ब्रह्म समाज के विचारकों से ही प्रेरित होकर उन्होने भारत के धार्मिक एवं आध्यात्मिक साहित्य का भी गूढ़ मन्थन किया। वे ब्रह्म समाज के सदस्य भी बने।

रामकृष्ण परमहंस से भेंट

ब्रह्म समाज के सम्पर्क में आने के बाद उनके मन में संशय और सन्देह के अनेक प्रश्न उठने लगे तथा मन में वैचारिक अन्तर्द्वन्द्व चलता रहा। उनकी इस वैचारिक बेचैनी से मुक्ति रामकृष्ण परमहंस से सम्पर्क के बाद ही हुई। नवम्बर 1880 में जब विवेकानन्द अपनी विश्वविद्यालय के प्रथम वर्ष की परीक्षा की तैयारी कर रहे थे तो अपने एक ईसाई मित्र के यहां आयोजित संगीत कार्यक्रम में उनकी रामकृष्ण से भेंट हई। रामकृष्ण ने उन्हें दक्षिणेश्वर बुलाया। वे अपने मित्रों सहित वहां पहुंचे। रामकृष्ण ने उन्हें गाना सुनाने के लिए कहा, विवेकानन्द ने गाना सुनाया जिसे रामकष्ण ने तन्मय होकर सुना। वे समय–समय पर रामकृष्ण से मिलने जाया करते थे। कुछ समय बाद विवेकानन्द के पिता की मृत्यु हो गयी उनका पारवार निराश्रित हो गया। वे भूख से व्याकुल नौकरी की तलाश में दर–दर भटकने लगे। रामकृष्ण ने उन्हें पुनः दक्षिणेश्वर बुलाया। स्वामी विवेकानन्द ने वहां जाकर श्री रामकृष्ण से उनके लिए मां काली से आर्थिक संकट से उबारने का वरदान मांगने को कहा, उस पर उन्होंने कहा कि यह वरदान तो स्वयं विवेकानन्द को ही मांगना चाहिए। स्वामी विवेकानन्द ने मां काली के दर्शन कर उनसे वह वर मांगना चाहा, किन्तु अपनी आर्थिक कठिनाइयों को भूलकर ज्ञान एवं श्रद्धा का वरदान मांगने लगे। श्री रामकृष्ण ने कई बार स्पर्श मात्र से उन्हें समाधि लगवा दी। विवेकानन्द ने रामकृष्ण से यह प्रश्न किया कि क्या कभी उन्होंने ईश्वर को देखा है तो उन्होंने कहा हां। उसी तरह से जिस तरह से तुम मुझे देख रहे हो। जब विवेकानन्द ने रामकृष्ण से कोई चमत्कार दिखाने को कहा तो वे उन्हें अन्धेरे कमरे में ले गये तथा रामकृष्ण ने अपना अंगूठा स्पर्श किया, इस स्पर्श से वे इतने चमत्कृत हुए तथा अलौकिक क्षेत्र में पहुंच गये कि उन्हें दिव्य ज्ञान हो गया। रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द को उस शिष्य के रूप में प्राप्त किया जिसकी उन्हें तलाश थी। 1886 में रामकृष्ण परमहंस का स्वर्गवास हो गया। मृत्यु के चार दिन पूर्व उन्होंने अपना सम्पूर्ण ज्ञान विवेकानन्द को समर्पित कर दिया और कहा कि आज मैंने तुमको अपना सर्वस्व दे दिया और मैं अब कंगाल फकीर हूं और मेरे पास कुछ नहीं है। इस शक्ति के द्वारा तुम संसार का महान् कल्याण करोगे। रामकृष्ण परमहंस की मृत्यु के बाद विवेकानन्द ने पांच वर्ष तक समूचे देश का भ्रमण किया और जनता से प्राप्त भिक्षा से गुजारा किया। इस अनुभव के फलस्वरूप उन्हें भारत में प्रयाप्त आश्चर्यचकित करने वाली विविधता के पीछे अन्तर्निहित एकता का ज्ञान हुआ, उन्होने भारतीय जनता की शक्ति को और उसकी कमजोरी को समझा। इन्ही यात्राओं के दौरान वे अल्मोड़ा में हिमालय की भव्यता से प्रभावित हए और कुछ समय के लिए वहां ठहरकर संस्कृत भाषा का गूढ़ ज्ञान प्राप्त किया। 1893 में वे अमरीका गये जहा शिकागो सर्व–धर्म सम्मेलन में भाग लिया। शिकागो सम्मेलन स्वामी विवेकानन्द के जीवन का एक स्वर्णिम अध्याय बन गया। उनका भाषण भारत की

सार्वदेशिकता और विशाल हृदयता के ओत–प्रोत था जिसने वहां के हर श्रोता को मुग्ध कर दिया। उन्होंने अपने भाषण का प्रारम्भ भाइयों और बहिनों (Brothers and sisters) के सम्बोधन से शुरू किया। यह सम्बोधन वहां की जनता के लिए बड़ा दिव्य था क्योंकि वहां सम्बोधन के लिए ''लेडीज एण्ड जेण्टलमैन' शब्दो के द्वारा किया जाता था। स्वामीजी के शब्दों को सुनकर श्रोताओं ने तुमुल हर्षध्वनि की जो दो मिनट तक चलती रही। स्वामीजी के इन शब्दों में स्वामीजी का महान् व्यक्तित्व, आन्तरिक भावना और तेज प्रकट होता था। दूसरे ही दिन समाचार–पत्रों में स्वामीजी को सम्मेलन का सर्वश्रेष्ठ और महानतम व्यक्ति वर्णित किया गया। सम्मेलन में आये हुए अन्य प्रतिनिधियों ने केवल अपने–अपने धर्म की ही प्रशंसा की, किन्तु स्वामीजी का भाषण उस धर्म पर हुआ जो आकाश के समान विशाल और समुद्र के समान गहन है। धर्म सम्मेलन में जब स्वामीजी ने अपना भाषण प्रारम्भ किया तो उसका विषय था, "हिन्दुओं के प्राचीन धार्मिक विचार'', किन्तु जब उनका भाषण समाप्त हुआ तब आधुनिक हिन्दू धर्म की सृष्टि हो चुकी थी। विवेकानन्द के भाषण के बाद आर्य धर्म, आर्य जाति और आर्य भूमि संसार की नजरों में पुजनीय हो गयी। विवेकानन्द ने हिन्दू जाति को अपनी मर्यादा का बोध कराया, हिन्दू धर्म का घृणा और अपमान के पंक से उद्धार कर उसे विश्व सभा में सर्वोच्च आसन पर बैठाया।

विवेकानन्द की इस विजय पर सारे भारत में उल्लास छा गया। सम्पूर्ण भारत में दीनता और लांछन से दबी भारतभूमि पर मानों आनन्द सरिता प्रवाहित हो गयी और भारत के सामाजिक और आर्थिक जीवन पर भी उसका प्रभाव पड़ा। **रोमां रोलां** ने इस जागरण का उल्लेख करते हुए लिखा है, ''सर्वप्रथम यहीं से भारत की उन्नति शुरू हुई, इसी दिन से इस दीर्घकाय कुम्भकर्ण की नींद टूटने लगी। विवेकानन्द के निधन के तीन साल बाद नई पीढ़ी ने जो बंगाल का विप्लव तथा तिलक एवं गांधी का आन्दोलन शुरू होते हुए देखा वह तथा आज के भारत के संगठित जन आन्दोलन विवेकानन्द के ही सशक्त आह्वान का फल है।'' 16 दिसम्बर, 1895 को विवेकानन्द स्वदेश लौट आये और 1897 को **कलकत्ता के बैलूर में उन्होंने 'रामकृष्ण मिशन'** की स्थापना की।

स्वामीजी की विदेश यात्रा के दो मुख्य उद्देश्य थे :

(1) वे भारतीयों के इस अन्धविश्वास को तोड़ना चाहते थे कि समुद्र यात्रा पाप है तथा विदेशियों के हाथ से अन्न जल ग्रहण करने से जाति का पराभव हो जाता है।

(2) भारत की आध्यात्मिक गुरुता को पश्चिमी राष्ट्रों के सम्मुख रखना तथा भारत के आध्यात्मिक विचारों और आदर्शों का पश्चिमी देशों में प्रचार करना जिससे कि वे भारत की अमूल्य धरोहर को जानने के प्रति उत्कंठित हो जायें। अमरीका के प्रसिद्ध पत्र 'द न्यूयार्क हेराल्ड' ने स्वामीजी के बारे में लिखा था, ''धर्म संसद में सबसे महान् व्यक्ति विवेकानन्द हैं। उनका भाषण सन लेने पर अनायास यह प्रश्न उठ खड़ा होता है कि ऐसे ज्ञानी देश को सुधारने के लिए धर्म प्रचारक भेजने की बात कितनी मूर्खतापूर्ण है।'' अमेरिका में

विवेकानन्द को ''तूफानी हिन्दू'' कहा गया। अमरीकी समाज का आध्यात्मिक ज्ञान देने के लिए न्यूयार्क में उन्होंने **'वेदान्त समाज'** की स्थापना की। वहीं सिस्टर निवेदिका से उनकी भेंट हुई जिसने स्वामीजी के यश को चारों ओर फैलाया। 1898 में उन्होंने पश्चिम की दूसरी यात्रा की। सेनफ्रान्सिस्को में **'शान्ति आश्रम'** की स्थापना की। स्वामीजी का **''हिन्दुत्व का महान रक्षक''** कहकर सम्मान किया गया। पुनः भारत लौटने पर 4 जुलाई, 1902 को 39 वर्ष की अल्पायु में ही उनका देहावसान हो गया। स्वामीजी ने रामकृष्ण परमहंस के धार्मिक सन्देश को लोकप्रिय बनाया तथा उसे भारतीय समाज की आवश्यकता के अनुरूप प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि अगर ज्ञान के साथ कर्म न किया जाय तो ज्ञान निरर्थक है। विवेकानन्द का सम्पूर्ण प्रयास अद्वैत वेदान्त को व्यावहारिक बनाने का रहा है।

विवेकानन्द चिन्तन के स्रोत एवं रचवनाएं (Vivekanand: Writings and Sources of Philosophy)– विवेकानन्दजी के चिन्तन के प्रमुख तीन स्रोत है।– वैद एवं वेदान्त, रामकृष्ण परमहंस के साथ सम्पर्क तथा स्वयं के जीवन का अनुभव। इन तीनो के पारम्परिक मिश्रण से ही विवेकानन्दजी के धार्मिक एवं दार्शनिक विचारों का प्रादुर्भाव हुआ। उनकी रचनाओं में ज्ञान, योग, पातंजलि सूत्रों का भाष्य तथा वेदान्त दर्शन पर भारत एवं विदेशों में उनके द्वारा दिये गये भाषण प्रमुख हैं। राजनीतिक चिन्तन के क्षेत्र में 'फ्रोम कोलम्बो टू अल्मोड़ा लेक्वर्स, इण्डिया एण्ड हर प्राब्लम्स' तथा मॉडर्न इण्डिया' प्रमुख रचनाएं हैं।

विवेकानन्द के धार्मिक विचार

विश्व में विवेकानन्द का नाम वेदान्त दर्शन के सन्दर्भ में सदैव याद किया जायगा। इसलिए ही उन्हें 'भारतीय वेदान्त की धरोहर' कहा जाता है। पश्मिी देशों में जाकर हिन्दू धर्म के आदर्शों के बारे में लोगों को जानकारी प्रदान कर स्वामीजी ने उनकी भारत के बारे में भ्रान्तियां दूर कीं। स्वामीजी का गीता और उपनिषदों पर बहुत अच्छा आधिपत्य था। बौद्ध और जैन साहित्य के वे पण्डित थे। ईसाई धर्म ग्रंथों से उनका परिचय स्थापित हो चुका थाः

(1) वेदान्त दर्शन– विवेकानन्द वेदान्त दर्शन के निष्पात अध्येता थे। वे अद्वैव वेदान्त के सन्देश वाहक तथा मायावादी थे, किन्तु उनकी बुद्धि समन्वयवादी थी। उन्होनें ब्रहा को सत्य माना था। उनका सच्चिदानन्द ब्रहा में पूर्ण विश्वास था। उनके अनुसार ज्ञान की सर्वोच्च अवस्था में पूर्ण सत्य का साक्षात्कार ही ब्रहा है। विवेकानन्द ने वेदान्त दर्शन के अन्तर्गत उस ईश्वर का प्रतिपादन नहीं किया तो मृत्यु के बाद स्वर्ग में समस्त सुख दे सकता है, किन्तु जीवित व्यक्तियों को रोटी उपलब्ध नहीं करा सकता। वे मानव को धर्मसंगत आचरण और विचार करने की प्रेरणा देते थे। मानव के समस्त विकास के लिए उन्होंने वेदान्त दर्शन का सहारा लिया। उनके अनुसार वेदान्त के सिद्धान्त शाश्वत हैं जो अन्य व्यक्तियों और सार्वभौमिक

धर्म की संज्ञा दी जा सकती है क्योंकि यह सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है, व्यक्तियों का नहीं। वेदान्त की प्रामाणिकता मानव के चिरन्तन स्वभाव में है।

विवेकानन्द के वेदान्त दर्शन के तीन पुमुख आधार हैं:

(i) मानव की वास्तविक प्रकृति ईश्वरीय है, (ii) जीवन का लक्ष्य उस ईश्वरीय प्रकृति की अनुभूति है, तथा (iii) सभी धर्मों का मूल लक्ष्य समान है। वेदान्त कोई संसार त्यागने का उपदेश नहीं अपितु समस्त संसार को ब्रह्ममय करने का पाठ पढ़ाता है। विवेकानन्द ईश्वर को सगुण और निर्गुण दोनों ही रूपों में स्वीकार करते हैं। वे ब्रह्म की अनुभूति के लिए ज्ञान, भक्ति और कर्मयोग तीनों का ही समन्वय आवश्यक मानते हैं। वे योग को ही धर्म का मूल आधार मानते हैं। उनके अनुसार योग एक सामान्य जन के लिए मानव और मानवता का सम्मिलन है, एक रहस्यवादी के लिए उनकी निम्न तथा उच्च सत्ता का मिश्रण है, एक प्रेमी के लिए तथा प्रेम के देवता का मिलन है तथा एक दार्शनिक के लिए समस्त अस्तित्व का बोध है। विवेकानन्द के अनुसार वेदान्त पण्डितों के शास्त्रार्थ और संन्यासियों की साधना का विषय नहीं है वरन् यह प्रतिदिन के पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन की कुंजी है। उनके लिए तो वेदान्त व्यक्ति के उत्थान और समाज के निर्माण तथा राष्ट्र के समन्वय का शास्त्र है। विवेकानन्द के अनुसार वेदान्त का आदर्श मानव के सच्चे स्वरूप को जानना है। विवेकानन्द यह चाहते थे कि वेदान्त के आधार पर भारत को एक बार फिर अतीत का गौरव प्राप्त हो जाय।

(2) धर्म के प्रति वैज्ञानिक विज्ञान दृष्टिकोण– धर्म के प्रति विवेकानन्द का दृष्टिकोण वैज्ञानिक और बुद्धिवादी है। विज्ञान और धर्म के बीच वे बहुत कम अन्तर खोजते थे। दोनों ही एकता के लिए अभियान करते हैं और दोनों ही व्यक्ति और जाति के लिए मुक्ति की खोज करते है। एक अर्थ में, समस्त ज्ञान ही धर्म है, और एक अन्य अर्थ में समस्त ज्ञान ही विज्ञान है। धर्म की वैज्ञानिक का अर्थ यह है कि वे अन्धविश्वास को उपयुक्त नहीं मानते थे।

विवेकानन्द के अनुसार, "धर्म आध्यात्मिक जगत के सत्यों से उसी प्रकार सम्बन्धित है जिस प्रकार से रसायनशास्त्र तथा दूसरे भौतिक विज्ञान जगत के सत्यों से हैं। जिस प्रकार से प्राकृतिक विज्ञान भौतिक जगत के नियमों का अनुसन्धान करता है उसी प्रकार धर्म नैतिक और तत्वमीमांसीय जगत् के सत्यों से सम्बन्ध और मनुष्य के आन्तरिक स्वभाव के भव्य नियमों की खोज करता है।

(3) साम्प्रदायिकता का विरोध– विवेकानन्द ने साम्प्रदायिकता का विरोध किया एवं साम्प्रदायिकता सद्भव पर बल दिया। वे धार्मिक कट्टरता के विरोधी थे। अपने ही धर्म को श्रेष्ठ मानना व दूसरे धर्मों की निन्दा करना अनुचित है। वे कहते थे जब तक धर्मोन्माद खून–खराबा और पाशविक अत्याचारों का अन्त नहीं होता तब तक किसी सभ्यता का विकास ही नहीं हो सकता। जब तक हम लोग

एक दूसरे के साथ सद्भाव नहीं सीखते, तब तक कोई भी सभ्यता सिर नहीं उठा सकती, और इस पारस्परिक सदभाव की पहली सीढ़ी है–एक दूसरे के धार्मिक विश्वास के प्रति सहानुभूति प्रकट करना।

विवेकानन्द धर्म को व्यक्ति और राष्ट्र दोनों को ही शक्ति प्रदान करने वाला तत्व मानते थे। उनके अनुसार ''मेरे धर्म का सार शक्ति है, जो धर्म हृदय में शक्ति का संचार नहीं करता वह मरी दृष्टि में धर्म नहीं है, चाहे वह उपनिषदों का धर्म हो चाहे गीता अथवा भागवत् का। शक्ति धर्म से भी बड़ी वस्तु है और शक्ति से बढकर कछ नहीं है। अपने गरु की तरह ही विवेकानन्द ने सर्वधर्म समभाव की घोषणा की तथा धार्मिक संकीर्णताओं की निन्दा की।

(4) हिन्दू धर्म की मानवतावादी व्याख्या– विवेकानन्द हिन्दू धर्म के पक्षपाती इस आधार पर थे कि वह नैतिक मानवतावाद और आध्यात्मिक आदर्शवाद का सार्वभौमिक प्रतिरूप है। उनके अनुसार हिन्दू उन दुरूह पन्थों. कर्मकाण्डों एवं अन्धविश्वासों परम्परागत मतवादो और आदिम कर्मकाण्डो का पुंज नहीं हैं कि जिन्हें देखने के लिए यूरोपीय आलोचक दुर्भाग्यवश सदैव इच्छुक रहता है। अपितु हिन्दू धर्म एक ऐसा व्यापक सत्य है जो न्याय, सांख्य, और वेदान्त के द्वारा अपने हृदय में गम्भीरतम दार्शनिक प्रतिभा को शरण दे सकता है। उनके अनुसार हिन्दू धर्म मानव जाति के उद्वार के लिए नैतिक तथा आध्यात्मिक विधानों और काल निरपेक्ष नियमों की संहिता है। पृथ्वी पर ऐसा कोई धर्म नहीं है जो हिन्द धर्म के समान इतने उच्च स्वर मानता के गौरव का उपदेश करता हो, किन्तु उन्हें पाखण्डी पुरोहितों से बहुत चिढ़ थी जिन्होंने अपने स्वार्थों के कारण हिन्दू धर्म को कलंकित कर रखा था स्वामीजी ने अपने देशवासियों से जाति आदि के नाम पर बनी पृथकता की दीवारों को गिरा देने का अनुरोध किया।

(5) विशाल एवं विस्तृत धर्म–विवेकानन्द का हिन्दू धर्म विशाल एवं विस्तृत है जिसमें उन्होंने उपनिषदों, गीता, वेदान्त और भक्ति आन्दोलन के विभिन्न सन्तों, सभी की विचारधाराओं को सम्मिलित किया उन्होंने वेदान्त में अद्वैत, विशिष्टाद्वैव तथा द्वैतवाद को सम्मिलित किया। उनके अनुसार विभिन्न दर्शन पद्धतियों में कोई विरोध नहीं है। मानव बुद्धि अद्वैतवाद से प्रारम्भ होती है, विशिष्टाद्वैत तक उठती हहै तथा अन्त में अद्वैतवाद में उसका अवसान होता है। मनुष्य शरीर, बुद्धि अथवा मन नही है, वह आत्मा है जिसे न अग्नि जला सकती है, न शस्त्र काट सकते हैं और न पानी गीला ही कर सकता है तथा जिसे वाय सुखा नहीं सकती। यह परमात्मा का ही एक अंश है। विवेकानन्द धर्म का मूल तत्व प्रेम, सेवा तथा त्याग में देखते हैं। भारत का सन्देश वेदान्त का सन्देश है। यह मानव निर्माण का धर्म है यह शक्ति का धर्म है। उन्होंने दरिद्र नारायण की सेवा करने और उनका उत्थान करने की बात कही। उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की कि वे बार–बार जन्म लेकर, कष्ट उठाकर दरिद्रों की सेवा करते रहें। उनके वेदान्त धर्म ने उन्हें समस्त मानव जाति की सेवा करने का अवसर दिया।

स्वामी विवेकानन्द के राजनीतिक विचार

(POLITICAL VIEWS OF SWAMI VIVEKANAND)

स्वामी विवेकानन्द का राजनीति में कोई विश्वास नहीं था और न ही कभी उन्होंने राजनीतिक कार्यकलापों में भाग ही लिया। फिर भी उनके भाषणों और विचारों में जो राजनीतिक दर्शन मिलता है वह उन्हें पश्चिम के राजनीतिक दार्शनिकों से कहीं आगे ले जाता है। उनके विभिन्न राजनीतिक विचार इस प्रकार हैं :

राष्ट्रवाद का सांस्कृतिक एवं धार्मिक सिद्धान्त

विवेकानन्द ने धर्म और संस्कृति की दुहाई देकर सोये भारत को उसके गौरवमय अतीत से परिचित कराया। उन्होंने भारत में ही नहीं वरन् पश्चिमी देशों में भी वेदों और उपनिषदों के उपदेश को गुंजा दिया। उन्होंने विश्व के सम्मुख भारतीय संस्कृति और सभ्यता की घोषणा की तथा हिन्दुओं में नवीन प्रेरणा एवं, शक्ति का संचार किया। इससे भारतीयों के मन में आत्म गौरव एवं राष्ट्रीय पुनरुत्थान का भाव उदित हुआ। उन्होंने जिस राष्ट्रीयता की नींव रखी उस पर खड़ा होकर ही यह देश पराधीनता के बन्धनों से मुक्त हो सका। स्वामीजी के प्रचार से हिन्दुओं में यह विश्वास उत्पन्न हुआ कि उन्हें किसी के भी सामने मस्तक झुकाने और लज्जित होने की आवश्यकता नहीं है। भारत में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता पहले उत्पन्न हुई, राजनीतिक राष्ट्रीयता बाद में जन्मी है.और इस सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के पिता स्वामी विवेकानन्द थे।

विवेकानन्द के अनुसार हर राष्ट्र के जीवन में एक प्रधान तत्व होता है, अन्य सब तत्व उसी में केन्द्रित होते हैं। भारत का प्रधान तत्व धर्म है अतः भारत के राष्ट्रवाद का आधार भी धर्म है। उनका विश्वास था कि आगे चलकर धर्म ही भारत के राष्ट्रीय चारित्र का मेरूदण्ड बनेगा। विवेकानन्द के शब्दों में, "हमारी आध्यात्मिकता ही हमारा जीवन रक्त है, हमारा धर्म ही हमारे तेज, हमारे बल और हमारे राष्ट्रीय जीवन का मूल आधार है। धर्म ने भारत की एकता तथा स्थिरता को बनाये रखने के लिए एक सृजनात्मक शक्ति का काम किया था। यहां तक कि जब कभी राजनीतिक शक्ति कमजोर हो गयी तो धर्म ने उसकी भी पुनः स्थापना में योग दिया। धर्म ही भारतीय जीवन का आधार रहा है, इसलिये सभी सुधार धर्म के माध्यम से ही किये जाने चाहिए। इस प्रकार राष्ट्रवाद का सांस्कृतिक एवं धार्मिक आधार विवेकानन्द की प्रमुख देन है। इस की प्रमुख देन है।

विवेकानन्द कहा करते थे कि आगामी 50 वर्ष के लिए भारत माता ही हमारी आराध्य देवी–बन जाये और अन्य देवी–देवताओं के स्थान पर हमारा ध्यान इसी पर केन्द्रित हो जाये। जन्मभूमि की सेवा को हम अपना सबसे बड़ा कर्तव्य समझें और हमें इस बात का गर्व हो कि हम भरतीय हैं। गर्व के साथ घोषणा करो–मैं भारतीय हूं और प्रत्येक भारतीय मेरा भारतीय मेरा जीवन है, भारत के देवी–देवता मेरे ईश्वर हैं,

भारतीय समाज मेरा बाल्यकाल पालना है, मेरे यौवन का आनन्द उद्यान है, पवित्र स्वर्ग और मेरी वृद्धावस्था का वाराणसी है। मेरे बन्धू बोलो, भारत की भूमि मेरा परम स्वर्ग है, भारत का कल्याण मेरा कल्याण है। इस प्रकार विवेकानन्द ने राष्ट्रवाद का एक नया स्वरूप प्रस्तुत किया। अन्धो बनकर उन्होंने यूरोप का अनुकरण करने की बजाय धर्म और कर्म में विश्वास करने की प्रेरणा दी।

स्वतन्त्रता का सिद्धान्त– राजनीतिक क्षेत्र में स्वामीजी स्वतन्त्रता को आवश्यक मानते है। यह किसी एक वर्ग, जाति, धर्म अथवा देश की बपौती नहीं है। यह तो मानव समाज के विकास का एक मुल मन्त्र है। उन्होंने कहा– जीवन, सुख और समृद्धि की एकमात्र शर्त चिन्तन और कार्य में स्वतन्त्रता है, जिस क्षेत्र में यह नहीं है उस क्षेत्र में मनुष्य जाति और राष्ट्र का पतन होगा।

विवेकानन्द ने स्वतन्त्रता को मनुष्य का प्राकृतिक अधिकार माना और कहा कि समाज के सभी सदस्यों को यह अवसर समान रूप से मिलना चाहिए। समाज के सभी सदस्यों को धन, शिक्षा तथा ज्ञान प्राप्त करने का समान अधिकार प्राप्त हो। उन्होंने कहा कि विचार और कर्म की स्वतन्त्रता जीवन, कल्याण और विकास की एकमात्र शर्त है। हमें ऐसे सामाजिक बन्धनो को जो स्वतन्त्रता की प्राप्ति के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करते हों, समाप्त कर देना चाहिए। स्वतन्त्रता मानव की अस्वाभाविक जिज्ञासा नहीं है वरन् उसके विकास की आधारशिला है। उसके अनुसार स्वतन्त्रता उपनिषदों का मुख्य सिद्धान्त था और उपनिषदों में शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक सभी प्रकार की स्वतन्त्रताओं का जमकर समर्थन किया गया है।

समानता का सिद्धान्त–राजनीतिक विचारों के जगत को स्वामीजी ने स्वतन्त्रता के सिद्धान्त के साथ–साथ समानता के आदर्श को भी प्रदान किया। यदि सामाजिक जीवन असमानताओं से परिपूर्ण हो तो राजनीतिक स्वतन्त्रता का सुख प्राप्त नहीं हो सकता। भारतीय सामाजिक जीवन में व्याप्त असमानता के बारे में स्वामीजी कहा करते थे कि जब तक भारत में एक–दूसरे को नीचा समझने की प्रवत्ति बनी रहेगी तब तक यहां साधारण जनता का विकास सम्भव नहीं है। सभी भूतों के एकत्व एवं समानता में विश्वास करने से सम्पूर्ण हितों की पूर्ति होती है। स्वामीजी के समानता के दायरे सीमित नहीं थे। वे स्त्री को पुरुष से किसी भी प्रकार में हीन अनुभव नहीं करते थे। समानता के बिना मानव किसी भी क्षेत्र में प्रगति नहीं कर सकता, अतः समानता के आदर्शों की पूर्ति होना आवश्यक है।

समाजवाद पर विचार

स्वामीजी अपने को सच्चा समाजवादी कहते थे। वे दो अर्थो में समाजवादी थे एक तो उन्होंने उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों के शोषण की भर्त्सना की तथा दूसरा उन्होने देश के सब निवासियो के लिए 'समान अवसर' के सिद्धान्त का समर्थन किया। यदि प्रकृति में असमानता है तो भी सबके लिए 'समान अवसर' होने चाहिए।

विवेकानन्द जात–पांत, छुआछूत और सम्प्रदायवाद आदि सभी प्रकार की विषमताओं के विरुद्ध थे। उनके अनुसार राष्ट्र का गौरव महलों से सुराक्षित नहीं रह सकता। उसे गौरवान्वित होने के लिए निर्धन को झोंपडी से उठाना होगा। उन्होंने कहा, 'गरीब और अभावग्रस्त, पीड़ित और पददलित सब आओ, हम सब रामकृष्ण की शरण में एक हैं।' उन्होंने गांव–गांव' जाकर गरीबों की सेवा करने को कहा। विवेकानन्द ने समाजवाद के लक्ष्य को प्राप्त कर के लिए हिंसात्मक क्रान्ति का समर्थन नहीं किया क्योंकि उनका चिन्तन आध्यात्मिक था जिसमें न्याय, प्रेम तथा सार्वभौमिक कल्याण निहित है।

अधिकार एवं कर्त्तव्य– विभिन्न समूहों एवं व्यक्तियों के बीच अधिकारों एवं कर्तव्यों के समर्थकों में संघर्ष चलता रहता है। विवेकानन्द ने अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों का समर्थन किया। वे चाहते थे कि सभी व्यक्ति अपने कर्तव्यों के पालन में ईमानदारी बरतें। मानव की गरिमा इस बात में नहीं है कि वह अपने अधिकारों के लिए आग्रह करे, उसकी गरिमार तो उत्सर्ग में है।

अन्तर्राष्ट्रीयतावाद एवं विश्वबन्धुत्व

विवेकानन्द उग्र राष्ट्रवाद के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीयतावाद और विश्व–बन्धत्व के समर्थक थे। शिकागो सम्मेलन में जहां अन्य सब प्रतिनिधि अपने–अपने धर्म के ईश्वर की चर्चा करते रहे, वहां केवल विवेकानन्द ने ही सबके ईश्वर की बात कही। वे मानव–मानव के भेद अस्वीकार करते थे। वे हिन्दू धर्म और भारत से असीम प्यार करते थे, किन्तु अन्य राष्ट्रों से उन्हें घृणा नहीं थी। उन्होंने कहा–निःसन्देह मुझे भारत से प्यार है, पर प्रत्येक दिन मेरी दृष्टि अधिक निर्मल होती जाती है। हमारे लिए भारत या इंगलैण्ड या अमरीका क्या है? हम तो उस ईश्वर के सेवक हैं जिसे ब्रह्म कहते हैं। जड़ में पानी देने वाला सारे वृक्ष को नहीं सींचता है।''

विवेकानन्द के सामाजिक विचार

(SOCIAL VIEWS OF VIVEKANAND)

स्वामी विवेकानन्द तत्कालीन समाज में व्याप्त समस्याओं से अनभिज्ञ नहीं थे। समाज की विभिन्न समस्याओं पर उन्होंने अपने महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किये।

अस्पृश्यता का विरोध– विवेकानन्द ने भारतीय समाज में व्याप्त अस्पृश्यता पर कटु प्रहार किया। वे जातियों के उच्चता व निम्नता के भेद को मिटाना चाहते थे व कहे थे–'तुम्हारे मन में जो ईश्वर स्थित है वही मेरे मन में भी, फिर यह भेद–भाव क्यों? यह असमानता क्यों? यह ऊंच–नीच की भावना क्यों? वे उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों के किये जाने वाले शोषण के विरुद्ध थे। जातियों का विभाजन समाज में काम के कारण हुआ न कि एक–दूसरे के प्रति छुआछुत बरतने के लिए। अस्पृश्यता तो सामाजिक जीवन पर

एक कलंक है। एक बोझ है। हमारा लक्ष्य अस्पृश्यता की इस दीवार को गिराना है और विविधता के बीच एकता स्थापित करना है।

नारी समानता के लिए प्रयत्न– विवेकानन्द स्त्री–पुरुष समानता के पक्षपाती थे। स्वामीजी का यह अडिग विश्वास था कि प्रत्येक राष्ट्र को अपनी स्त्री–जाति का पूरा सम्मान करना चाहिए। जो देश, जो राष्ट्र स्त्रियों का आदर नहीं करते, वे कभी उन्नति नहीं कर पाये और न भविष्य में ही कर सकेंगे। "इस देश में स्त्रियों की निन्दा ही की गयी है, उनकी उन्नति के लिए कोई प्रयास नहीं किये गये। हमारी प्राचीन मान्यताओं में नारी को शिक्षा एवं अन्य क्षेत्रों में पुरूषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे फलस्वरूप मैत्रेयी और गार्गी जैसी विदुषी स्त्रियां पैदा हुई। जब उन पर सार्वजनिक जीवन में भाग लेने पर प्रतिबन्ध लगा दिया तो समाज का भी पतन होने लगा। जहां पर स्त्रियों का सम्मान नहीं होता, वे दुःखी रहती हैं, उस परिवार की उस देश की उन्नति की आशा नहीं की जा सकती इसलिये उन्हें पहले उठाना होगा। स्त्रियों को शिक्षित बनाये बिना उनका विकास किसी भी हालत में सम्भव नहीं है। उन्होंने स्त्रियों को धार्मिक और चरित्र सम्बन्धी शिक्षा देने पर बल दिया। स्वामी जी के कारण स्त्रियों में सबल साहस और आत्मविश्वास मुखरित हुआ। वे परमुखापेक्षी स्त्री की अपेक्षा साहसी, उदार. धार्मिक और कर्तव्यनिष्ठ महिलाओं को सामाजिक जीवन का संबल मानते हैं।

बाल–विवाह का विरोध– स्वामीजी के काल में भी बाल–विवाह का प्रचलन था। स्वामीजी ने बाल–विवाह की भर्त्सना की और कहा कि बाल–विवाह से असामयिक सन्तान की उत्पत्ति होती है और अल्पायु में सन्तान धारण करने के कारण हमारी स्त्रियां अल्पायु होती हैं और उनकी दुर्बल और रोगी सन्तान देश में भिखारियों की संख्या बढ़ाने का कार्य करती हैं। उन्होंने कहा हमें सामाजिक जीवन से इस कलंकित बोझ को मिटाना होगा।

दलितों का उत्थान– विवेकानन्द जातिप्रथा के विरोधी थे, किन्तु एक व्यवहारवादी विचार के रूप में वे यह भी जानते थे कि इसे समूल नष्ट नहीं किया जा सकता। उनका विचार था कि चातुर वर्ण व्यवस्था को पुनर्जीवित किया जाये तथा निम्न वर्णों को ब्राह्मणों के धरातल पर लाया जाये तथा निम्न जातियों को संस्कृति प्रदान की जाये।

विवेकानन्द के शैक्षणिक विचार

विवेकानन्द का विचार था कि भारत की दयनीय स्थिति का मूल कारण अशिक्षा है। वे अग्रेंजो द्वारा प्रचलित की गयी शिक्षा पद्धति के कटु आलोचक थे, क्योंकि अंग्रेजी शिक्षा पद्धति केवल क्लर्कों का निर्माण करने वाली शिक्षा है, इसके स्थान पर वे गुरुकुल शिक्षा पद्धति के समर्थक थे। वे शिक्षा में धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन को अनिवार्य बनाने के पक्ष में थे। उनका मूल लक्ष्य एक विशुद्ध भारतीय शिक्षा पद्धति का निर्माण करना था। इस धार्मिक शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय भी कम होगा साथ ही अन्धविश्वास और रूढ़ियों

को समाप्त करने में भी सहायक होगी। विवेकानन्द चरित्र के गठन के लिए उपयुक्त शिक्षा देने के समर्थक थे। उनका मत था कि वर्तमान भारत को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो उसके मूल–बिसरे अतीत को समझने में सहायता करे, उसे अपने वर्तमान और भविष्य के निर्माण में सहयोग दे। चारों तरफ हमें एक निराशा का वातावरण ही दिखायी देता है, यह वातावरण इसलिए अधिक मुखर हो रहा है क्योंकि आज हम पाश्चात्य शिक्षा की ओर दौड़ रहे हैं। धार्मिक शिक्षा ही हमें साहसी, आत्मविश्वासी, त्यागी और संयमी जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं, धर्म ही मनुष्य को अभय प्रदान करता है। हमारी पतनावस्था हमारे अज्ञान और अन्धविश्वास के कारण है, शिक्षा को इन पर विजय प्राप्त करनी है। गुरू और शिष्य के वैयक्तिक सम्पर्क समस्याओं का निदान भी प्रस्तुत करेंगे और नये भारत का निर्माण करने में भी सहायक होंगे।

विवेकानन्द जहां एक तरफ प्राचीन धार्मिक भारतीय शिक्षा के पक्षपाती थे वहीं दूसरी ओर उन्होंने अंग्रेजी भाषा के अध्ययन पर भी बल दिया क्योंकि यह एक सम्पर्क भाषा है जिसके आधार पर वर्तमान वैज्ञानिक पद्धति का लाभ उठाया जा सकता है।

निष्कर्ष– स्वामी विवेकानन्द ने वैदिक धर्म और संस्कृति के समस्त स्वरूपों का सही प्रतिनिधित्व किया। उन्होंने मृतप्राय हिन्दू धर्म को गंगाजल पिलाकर समस्याओं से लड़ने की अभूतपूर्व शक्ति प्रदान की। ईसाई मत की ओर आकर्षित हो रहे समाज को उन्होंने अपने धर्म को बनाये रखने की प्रेरणा दी। उनके प्रबुद्ध ज्ञान के कारण ही हिन्दू धर्म विश्व मंच पर वैज्ञानिक और तार्किक आधारों पर मान्यता प्राप्त कर सका। टैगोर ने तो सही कहा है कि यदि कोई भारतवर्ष को समझना चाहता है तो उसे विवेकानन्द को पढ़ना चाहिए। विवेकानन्द ने हिन्दुत्व को संगठित कर आत्मगौरव की भावना पैदा की। अन्धविश्वास से जकड़ी भारतीय जातियों को उन्होंने रूढिवादी कारा से मुक्त कराया। वे विभिन्नता में एकता के समर्थक थे। उन्होंने मारतीय समाज को जागृत करके उसे उसका खोया हुआ वैभव प्रदान किया। भारतीय राष्ट्रवाद को धर्म से सम्बद्ध कर उन्होंने राष्ट्रवाद और धर्म दोना की जड़ो को मजबूत किया। पस्तुतः वे नये भारत का निर्माण करना चाहते थे। रामकृष्ण मिशन की स्थापना कर उन्होंने भारत के आध्यात्मिक उत्थान और जनसेवा का महान कार्य किया।

सुभाष चन्द बोस विवेकानन्द को अपना आध्यात्मिक गुरु मानते थे। अरबिन्द उनके महान् प्रशंसक थे। अरबिन्द के शब्दों में, विवेकानन्द भारत के अतीत को उसका पुनर्निर्माण करके सुरक्षित रखना चाहते थे। विवेकानन्द में हम हिन्दू पुनर्जागरण की दयानन्द की अपेक्षा एक अधिक पूर्ण एवं आत्मचेतनापूर्ण अवस्था देखते हैं। पश्चिम को स्वामीजी की देन का उल्लेख करते हुए **सिस्टर निबेदिता** ने लिखा है–इस देश में स्वामी विवेकानन्द के उपदेश हममें से बहुतों को प्यासे को शीतल जल के समान तृप्तिदायक लगे हैं.... ईसाई धर्म के कट्टरतापूर्ण सिद्धान्तों में विश्वास करना अब हमारे लिए असम्भव सा हो गया है...वेदान ने हमारे धर्म के विश्वासों और आवेगों को एक दार्शनिक आधार प्रदान किया।